अवरोधन। परन्तु शरीर के निश्चेष्ट और शान्त होने पर भी मन क्रियाशील रहता है, जैसे स्वप्न में। किन्तु मन से उत्तम बुद्धि की संकल्पशक्ति है तथा बुद्धि से भी उच्चतर स्वयं आत्मा है। अतएव यदि आत्मा भगवन्निष्ठ हो जाय तो बुद्धि, मन, इन्द्रिय आदि उसके सब अनुगामी भी अपने आप भक्तिनिष्ठ हो जायेंगे। 'कठोपनिषद्' की एक कथा में उल्लेख है कि इन्द्रियों से इन्द्रियविषय बली है और मन इन्द्रियविषयों से भी बली है। इसलिए यदि मन को प्रत्यक्ष रूप से भगवत्सेवामृत में अहर्निश निमज्जित रखा जाय, तो इन्द्रियों के लिए अन्य विषयों में तत्पर होने की कुछ भी सम्भावना शेष नहीं रहेगी। इस मनोभाव का विवेचन पूर्व श्लोकों में द्रष्टव्य है। निस्सन्देह, भगवत्सेवा-परायण मन के लिए तुच्छ विषयों के उन्मुख होना असम्भव हो जायगा। इसीलिए कठोपनिषद्' में आत्मा को 'महान्' कहा गया है। इस प्रकार इन्द्रियविषयों, इन्द्रियों, पन, बुद्धि आदि सब तत्त्वों से आत्मा अति परे है। अतएव सीधे-सीधे आत्मा के स्वरूप को समझने से सम्पूर्ण प्रापञ्चिक समस्या का समाधान हो सकता है।

जीवात्मा का कर्तव्य केवल इतना है कि बुद्धि के द्वारा अपने स्वरूप की जिज्ञासा करे और चित्त को कृष्णभावनामृत में निमज्जित रखे। इससे सम्पूर्ण समस्या का समाधान हो जायगा। प्रारम्भिक साधक को इन्द्रियविषयों से दूर रहने का परामर्श देया जाता है। परन्तु यदि भगवान् श्रीकृष्ण के शरणागत होकर बुद्धि के सहित चित्त को कृष्णभावना में निमज्जित कर दिया जाय, तो मन सशक्त हो जायगा, जिससे सर्प के समान अति बलवान् इन्द्रियाँ भी खण्डित विषदशधारी सर्पों के सनान अशक्त हो जायेंगी। यद्यपि आत्मा बुद्धि, मन तथा इन्द्रियों का स्वामी है; परन्तु यदि उसे कृष्णभावना में श्रीकृष्णसंग के द्वारा सशक्त नहीं किया जायगा, तो चित्त के वेगवश परमार्थ से पतन की पूर्ण सम्भावना है।

2/3

एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना।
जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम्।।४३।।

एवम्=इस प्रकार; **बुद्धेः**=बुद्धि से; **परम्**=श्रेष्ठ; **बुद्ध्वा**=जानकर; **संस्तभ्य**=वश में करके; **आत्मानम्**=मन को; **आत्मना**=बुद्धि द्वारा; **जहि**=मार; **शत्रुम्**=शत्रु को; **महाबाहो**=हे महाबाहु; **कामरूपम्**=कामरूपी; **दुरासदम्**=दुर्जेय।

अनुवाद

इस प्रकार हे महाबाहु! इन्द्रियों, मन और बुद्धि से परे अपने दिव्य आत्मस्वरूप को जानकर और बुद्धि के द्वारा चित्त को वश मे करके आत्मशक्ति से युक्त होकर इस कामरूपी कभी शान्त न होने वाले दुर्धर्ष शत्रु को मार।।४३।।

तात्पर्य

श्रीमद्भगवद्गीता का यह तृतीय अध्याय निर्विशेष शून्यवाद को पूर्ण रूप से निरस्त करके जीव को यह ज्ञान प्रदान करता है कि वह श्रीकृष्ण का नित्य दास है